International Journal of Multidisciplinary Research and Development 2014; 1(6): 232-236

International Journal of Multidisciplinary Research and Development

IJMRD 2014; 1(6): 232-236
www.allsubjectjournal.com
Received: 08-10-2014
Accepted: 12-11-2014
E-ISSN: 2349-4182
P-ISSN: 2349-5979
Impact Factor: 3.762

विवेक कुमार
एमए ,इतिहासद्ध यूजीसी नेट

Correspondence:
विवेक कुमार
एमए ; इतिहासद्ध यूजीसी नेट

प्रारंभिक ब्रिटिश कर प्रणाली

विवेक कुमार

सार

अंग्रेज शासकों ने जानबूझकर इस जटिलता का निर्माण नहीं जिया था है सैकडों वर्षों से तरह.तरह से परीक्षण और निरीक्षण करके, गलती करने के बाद उसका सुधार करके, हर प्रदेष के ग्रामीण वर्गों के समावेष और कृशि की उन्नति पर विचार करके, सबसे कम झमेला करके सबसे ज्यादा भू–स्वराज कैसे वसूल किया जाए, इसी इरादे से अंग्रेज षासक वर्ग ने अनेक तरह की भूमि–व्यवस्थाओं कि परिकल्पना की थी द्यमसलनए 1765 में जब ईस्ट दरिया कंपनी ने मुगल सपाट से बंगाल के सूबे की दीवानी अथवा भू. राजस्व संग्रह करने का अधिकार पाया तभी से यह इतिहास शुरु होता है । 1759.60 में पहल.पहल 24 परगना की जमींदारीए फिर मिदनापुरए चटगाँव और बर्दवान के भू.राजस्व संग्रह का अधिकार पाने के बाद से पाँच थपों के अंदर ही अंग्रेज कंपनी मुगल सम्राट के फरमान ने समूचे बंगाल सूये की दीवानी के पद पर उन्नति करके पहुंच गई । यह 1765 से 1793 तक भू. राजस्व संग्रह की व्यवस्था करते करते परेशान हो गई थी । यह इतिहास स्थानीय समाचार.जैसा हैए फिर भी इसकी मोटी जानकारी जरुरी है |

खोजशब्द: भू.राजस्व, मालगुजारी, जमींदारी, रेयतवारीए महलवारी.

1 परिचय

पहला दौर (1764.1772): इसी समय अंग्रेजों ने मोहम्मद रजा खाँ को नायब दीवान कीं पदवी देकर सामने खडा किया और कैसे ज्यादा से ज्यादा भू दृराजस्व वसूल किया जाएए इस बात की कोशिश को परीक्षण के बतौर नीलाम करके स्थानीय भू.राजस्व संग्रह का भार ठेके पर देना, जिलों में श्रेवेन्यू सुपरवाइजर की नियुक्ति ' (1770), मुर्शिदाबाद और पटना में श्रेवेन्यूकाउंसिल ' और कलकत्ता में कंट्रोलिग कमेटी' की नियुक्ति (1771) आदि कदम उठाए गए। पर मुशिकल यह थी कि नीलामी में बोली बोल कर जो लोग दो.एक साल के लिए ठेके लेते थे वे चट-पट जितना संभव हो, उतना लाभ उठाने के लिए बहूत अधिक बढाकर राजस्व की वसुली करते थे । कई बार इसके बावजूद कंपनी को देय राशि पूरी नहीँ हो पाती थी | सुपरवाइजर साहब लोग इस बात से एकदम अनभिज्ञ थे कि कहाँ कितना राजस्व-भार बर्दाशत किया जा सकता है, अथवा वे लोग एकदम लापरवाह रहते थे, क्योंकि वे अपने व्यक्तिगत धंधों में व्यस्त होते थे । तब हालत और भी संगीन हो जाती थी जब ऐसे में प्रकृति का प्रकोप होता था, जैसे सूखा और 1776 का कुख्यात अकाल| बगाल में एक तरफ नवाब का शासन था, दूसरी तरफ भू.राजस्व उगाहने का काम अंग्रेज कंपनी के हाथ में था - जेसे दो राजा हों । यह एक भयानक स्थिति थी| बकिम बाबू ने ' आनंद मठ ' में दीवानी काल की दुहरी राज्य-व्यवस्था और 1770 के अकाल का वर्णन इस प्रकार किया हैं: "अंग्रेज उन दिनों बंगाल कै दीवान थे | वे सरकारी मालगुजारी के पेसे तो वसूल कर लेते थे, पर तब तक उन्होंने बंगालवासियों के जान .माल की सुरक्षा की जिम्मेदारी नहीँ ली थी । उन दिनों पेसे वसूलने की जिम्मेदारी तो अंग्रेजों की थी और जान.मालं की सुरक्षा का भार पापी, नराधम, विष्वासघातिए मनुष्य जाति के कलंक मीर जाफर पर था । मीर जाफर गोली खाता था और पाँव फैलाकर सोता था । अंग्रेज पैसे वसूलते थे और 'डिस्पैच' (रपट) लिखते थे । बंगाली रोता था और कंगाल होता जाता था । "ऐसे में 1769-70 का अकाल आया |" क्वार.कार्तिक में एक बूंद पानी नहीँ बरसा | खेतो में खडे धान के पौधे सूखकर खरपतवार हो गए । जिन थोडे से खेतों में फसल लगी थी उसे राजा के कर्मचारियों ने सिपाहियों कै लिए खरीद लिया । लोगों को खाना नहीं मिल पा रहा था-पर मुहम्मद रजा खाँ मालगुजारी वसूली का मालिक था| उसने एकदम से सौ पर दस रुपए मालगुजारी बढा दी । पूरे बंगाल में हाहाकार मच गया । लोगों ने पहले भीख माँगना शूरू किया, बाद में भीख देने वाला भी कोई नहीं रहा । लोगों ने अपने बैल–बछिया बेच दिए । हल.फाल, घर.द्वार बेच दिए और बीज के लिए रखा धान खा गए, जमीनें बेच दीं, फिर अपनी लडकियां बेचने लगे, फिर अपने लडके बेचने लगे । बाद में लड़की- लड़कों, स्त्रियों को भी कौन खरीदे ? खरीददार कहीं नहीं थे, सभी सिर्फ बेचना चाहते थे । कुछ भी खाने को नहीँ रहा तो लोग पेडों के पत्ते खाने लगेए घास खाना शूरु किया । जंगली जडी.बूटीं खाने लगे । कुछ देश छोडकर परदेश भाग गए । जो भागे वे परदेश में भूख से मरे । जो नहीं भागे वे न खाने लायक चीजें खाकरए बिना खाए या बीमार होकर मरने लगे । " इस तरह गाँव में अकाल के चरण पड़ रहे थे: ' "कमरे के अंदर दोपहर में ही अँधेरा घिर आया था । उस अँधेरे में रात में खिलने वाले दो फूलों की तरह एक दंपति बैठे सोच-विचार कर रहे ये, अकाल उनके सामने खडा था | महेंद्र और कल्याणी को हमें यहीं छोड़ देना हौगा, पर यह जान लेना उचित होगा किं बंकिम का उपरोक्त वर्णन कोई कपोलकल्पना नहीं है । इसका आधार विलियम हंटर का इतिहास है, जिसे उसने ढेर सारे दस्तावेजों और इकरारनामों की छानबीन के बाद लिखा था । एक बात और भू.राजस्व की वसूली ऐसी कठोरता से की गई थी कि 1770 के अकाल वर्ष में, बंगाल के एक तिहाई बाषिंदों की मौत के बावजूदए भू.राजस्व एकदम ठीक जमा हूआ था |

दूसरा दौर:- 1772 से 1786 - अंग्रेजों ने तय किया कि वे खुद दीवान का काम करेंगे । 'नेटिव' (भारतीय) नायब दीवान को हटा दिया गया । भू. राजस्व जमा करने का केंदीय खजाना मुर्षिदाबाद से कलकत्ता लाया गया |

और बडी बातं यह कि 1772 से दो-एक साल की इजारेदारी की जगह, पाँचसाला बंदोबस्त शूरू हुआए और पूराने जमींदारों के प्रति पक्षपात की शुरुआत हूई, क्योकि भू. राजस्व के मामलों को, भुँईफोड इजारेदारों के मुकाबलेए वे कहीँ अच्छी तरह जानते ये । फिर भी नीलामी की प्रथा को बनाए रखा गयाए क्योकी ज्यादा से ज्यादा कितना भू. राजस्व वसूला जा सकता है, इसका जवाब नीलामी के बाद ही मिलता था । वारेन हेस्टिंग्स ने देखा कि इस व्यवस्था में सबसे कम परेशानी है । पाँचसाला बंदोबस्त खत्म होने पर 1777 सेञ्चसालाना बन्दोबस्त शुरू हुआ । ज्यादातर मामलों में पिछले तीन सालों की वसूली के आधार पर जमींदारों के साथ इकरार किया गया । तरह.तरह के नौकरशाही फेर.बदल के बीच उल्लेखनीय बात थी, कलकत्ता से भू.राज़स्व.नीति का निर्धारण करनेवाले औजारों को और धारदार बनाना। इसलिए कलकत्ता में श्कंट्रोलिंग. काउंसिल आँफ रेवेन्यू', उसके बाद रेवेन्यू बोर्ड,' और सबसे बाद में 'बोर्ड आँफ रेवेन्यू ' की स्थापना हूई|

1786 से एक नया दोर शूरू हूआए जिसका खात्मा 1793 में स्थायी जमींदारी बंदोबस्त में हुआ । नीति में चार.बार परिवर्तन करने से पता चलता है कि तरह-तरह के परीक्षण और निरीक्षण के बावजूद कंपनी एकदम चाक.चौबंद भू.राजस्व व्यवस्था नहीं बना सकीं । इससे इस बात का भी पता चलता है कि हेस्टिग्स के समय से ही उच्च पदाधिकारियों कै बीच आपसी बम-चक मची हुई भी कि बंदोबस्त कितने समय के लिए किया जाए, किनके साथ किया जाएए भू.राजस्व का निर्धारण कैसे हो ? रजित गुहा ने हमेँ दिखाया है कि यूरोपीय अर्थशास्त्र के आधूनिक युग का एक घरानाए जिसे ' फिजियोक्रेट ' कहते हैं, उन दिनों प्रभावशाली था । इस बीच 1784 में इंग्लैंड के प्रधानमंत्री पिट के भारत संबंधी कानून में कंपनी सरकार का हस्तक्षेप बढ़ गया । सन् 1786 में एक नामी-गिरामी गवर्नर भारत आए । यह थे लार्ड कार्नवालिस । वे मुख्यालय से यह निर्देश लेकर आए ये कि आखिरकार कोई फैसला तो लेना ही होगा । अभी भी बंगाल 1776 के अकाल के धक्के से सँभल नहीँ पाया था । लोगों को उम्मीद थी कि अगर भू.राजस्व को दर तय हो जाए तो शायद कोई रास्ता निकाला जा सके । इसके अलावा भू-राजस्व का परिमाण अगर तय कर दिया जाए तो भविष्य में उसे बढाने की क्षमता कंपनी के पास नहीं रह जाएगी । पर कुछ समय के लिए वह निष्चित हो सकेगी । इसकी जरूरत भी थीए क्योंकि इसी भू-राजस्व से प्राप्त धन से इस देष में माल खरीदकर कंपनी इंग्लैंड में बेचती है । 1789 में इसीलिए कार्नवालिस ने जमींदारों के साथ एक दससाला बन्दोबस्त किया और यही बन्दोबस्त 1793 में ' इस्तमरांरी बन्दोबस्त' नाम से प्रसिद्ध हुआ । संक्षेप में, 1765-1793 के दोरान प्राप्त जानकारी का फल यह था कि कृशि-उत्पादन की मात्रा और दाम कितना हैए कृषि व्यवस्था को नष्ट किए बिना कितना भू-राजस्व वसूल किया जा सकता हैए भू-राजस्व-निर्धारण और वसूली में होनेवाले खर्च को किस प्रकार कम किया जा सकता है. यह सब कंपनी के साहबों की समझ में नहीं आया था । अंत में अपनी की हालत जव पतली लो रही थी तब लार्ड कार्नवालिस ने कहा रू "भू-राजस्य की वसूली जमींदारों के हाथ होए वे प्रजा से कितना वसूल करें, इस बारे में कंपनी को कुछ तय नहीं करना है | जो भूमि-कर कंपनी को दीवान देता है, वहीँ उसकी जगह जमींदार दे तो हमें कोई फर्क नहीं पड़ता । और अगर जमींदार भू-राजस्य न दे सके तो उसकी जमींदारी खत्म करके उसकी जगह नए जमींदार को बिठा दिया जाए । "बार–बार भू-राजस्व. निर्धारण की परेशानी से बचने के लिए कार्नवालिस ने सिफारिश की –" 1789-90 में जो देय भू-राजस्य था वह मोटे तौर पर प्रजा द्वारा जमींदारों को देय धन का 9 / 10 भाग था । उसे ही स्थायी रूप से भूमि-कर मान लिया जाए । " यहीँ था स्थायी अथवा इस्तमरारी बन्दोबस्त | भारत के विभिन्न भागों में भूमि का कैसा बन्दोबस्त था यह बात बंगाल के ष्इस्तमरारी बन्दोबस्त' के अलावाए हम सभी के लिए अधिक परिचित नहीं है । पर जो अलग - अलग भूमि -व्यवस्थाएँ 19वीं सदी में कायम हुई थीं उनके बारे में मोटे तौर पर जानकारी हासिल किए बिना ग्रामीण अर्थव्यवस्था के बाहरी और भीतरी विभिन्न प्रभेदों को जान पाना मुष्किल है| इसलिए 18वीं षताब्दी के आखिर से 19वीं षताब्दी के बीच तक के समय में सरकार ने जो भूमि-व्यवस्थाएं तैयार कीं उनके मारे में एक धारणा बनाना जरूरी है | छोटे बच्चे जैसे काठ के चौकोर टुकडे या ' ब्लाक्स' लेकर खेलते हैय मान लीजिए वैसे ही तीन तरह कै टुकडे थे । इनके नाम थे-'जमींदारी', 'रैयतवारी", और ृमहलवारी' । इनमें से हरेक के प्रभेद थे : मसलन 'जमींदारी' व्यवस्था में कहीं– कहीं भू-राजस्व का स्थायी रूप से निर्धारण कर दिया जाता था तो दूसरी जगहों पर अस्थायी बंदोबस्त के तहत थोडे-थोड़े दिनों बाद भू-राजस्व को नए सिरे से निर्धारित किया जा सकता था | भू -राजस्य निर्धारित करने की प्रक्रिया भी भिन्न–भिन्न हो सकती थी | कही पर फसल का दाम कूतकर उसमें से उत्पादन खर्च निकाल कर खेती का जो षुद्ध लाभांष होता था उसका एक हिस्सा भू–राजस्व के रूप मे लिया जाता था । या उस परेशानी में न पडकर पहले जितना भू–राजस्व था उसी को कृशि उपज के दाम के अनुसार कम या ज्यादा करके नए सिरे से निर्धारित किया जा सकता था । इसी प्रकार महलवारी" या 'रैयतवारी व्यवस्था में भी बंदोबस्त की अवधि के लिये चिर–स्थायी या 30 वर्श या 20 वर्ष के लिएए इत्यादि" (भू–राजस्व के निर्धारण के आधारों मे खेती के लाभ का हिसाब या पुराने भू–राजस्व का हिसाब इत्यादि) विभिन्नताएँ संभव । स्वभाविक रूप से ये सब विभिन्नताएँ अलग अलग प्रदेषों कि भूमि व्यवस्थाओं मे लागु की गई थी इसीलिए ब्लाक्स' की मिसाल दी गई है जैसे कि थोडे से अलग.अलग ढंग के ब्लाक्स थे मगर उन्हें अलग-अलग ढंग से जोडकर ब्रिटिश भारत में विभिन्न भूमि -व्यवस्थाएँ तेयार की गई थी । इस खेल को समझ लिया जाए तो भूमि .व्यवस्था की विभिन्नताओं से पैदा हुई जटिलता को समझना आसान हो जाता है|

स्थायी जमींदारी, यानी इस्तमरारी बंदोबस्त उन दिनों विभिन्न कारणों से कार्नवालिस और कंपनी के मालिकों को कमोवेश ठीक लगा था । पहली बात यह कि भू-राजस्व-निर्धारित और वसूली को लेकर 1765 से ही कंपनी परेशान थी उससे निस्तार पाने का उपाय था यह इस्तमरारी बंदोबस्त । दूसरे, उसे यह भी आशा थी कि व्यक्तिगत स्वामित्व के ' जादू क` डंडे का स्पर्श ' पाकर जमीदारो द्वारा खेती-बाडी करने की अनुकूल मानसिकता का प्रसार होगा । यहाँ याद रखना चाहिए कि तत्कालीन इंग्लैंड में ऐसे अनेक जमींदार और उन्नतिशीलं किसान थे जो ' कृषि क्रांतिश द्वारा ' औद्योगिक क्रांति' को तेज करना चाहते थे । तीसरे, शायद कार्नवालिस की नीति के पीछे एक राजनेतिक चाल भी थी- वह यह कि अपने वर्ग दृस्वार्थ कीं खातिर जमींदार ब्रिटिष राज का समर्थक हो जाएगा द्य चौथे, अगर जमींदार भू- राजस्व जमा करने में असमर्थ होगा तो जमींदारी नीलाम हो जाएगी- यह नियम (जिसे श्सूर्यास्त कानून' कहा जाता थाए क्योंकि भू- राजस्व जमा करने की तारीख बीतते ही जमींदारी खत्म हो जाती थी) इस उम्मीद से बनाया गया था कि दक्षता के अभाव में जमींदारी एक हाथ से दूसरे हाथ मेंश्चली जाएगी । और अंत में, 1770 के कुख्यात अकाल के दिनों में बंगाल की प्राय: एक तिहाई जमीन परती पड़ गई थी । उम्मीद की गई थी कि इस्तमरारी बंदोबस्त के बाद से दुबारा खेती–बाडी बढेगी |

जिन उम्मीदों से 1793 में इस्तमरारी बन्दोबस्त क्रिया गया थाए उनमें से तीन मोटे तौर पर पूरी हुई : वे थीं जमींदारों की स्वामिभक्तिए भू- राजस्व की वसूली में दक्षता और बंगाली जाति कीं स्वाभाविक वंष-जवृद्धि के फलस्वरूप खेती-कानी का प्रसार । 1860 के दशक में इस्तमरारी बन्दोबस्त का स्वरूप क्या थाए इस विषय में 'बंग दर्शन' में बकिम बाबू ने जो विशलेषण किया था वह, ताज्जुब की बात है, इतने दिनों के शोध और खोज.बीन के बाद भी बहुत सही प्रमाणित होता है:

'ब्रिटिश शासन में प्रजावृद्धि के फलस्वरूप कृषि-कार्य का विस्तार हूआ खेती की बढोतरी का एक और कारण था । ब्रिटिश राज की स्थापना तक इस राज्य का वाणिज्य बढ़ रहा था ... फलस्वरूप विदेशों में भेजने के लिए साल दर साल और अधिक कृशि–उत्पादों की जरूरत थी । अतएव इस देश में हर साल खेती बढ़ रही है ... खेती के बढ़ने का फल क्या है ? देश की दौलत में वृद्धि ... यह दौलत खेती से पैदा होती है-इसे किसान को ही पाना चाहिए । पाठक अचानक सोच सकते हैं कि किसान इसे पाता है । वास्तविकता तो यह है कि उसे यह दौलत नहीं मिलती । वह राजकीय खजाने में चली जाती है ... इसमें कोई संदेह नहीं कि बनिये और महाजन इसका थोडा हिस्सा पा रहे हैं ... ज्यादातर धन जमींदार के ही हाथ में जाता था । पहले ही कहा जा चुका है कि जनसंख्या में वृद्धि हो रहीँ थी । जिस जमीन का पहले एक उम्मीदवार थाए जनसंख्या बढ़ जाने के बाद उसके दो उम्मीदवार हो जाएँगे ३ बाजार में जैसे ग्राहक ज्यादा हो तो आलूए परवल का भाव चढ़ जाता हैंए उसी तरह प्रजो की वृद्धि से जमीन का भाव चढा । यह बढी हुई कीमत जमींदार के ही तो पेट में जाती थी । "

यहाँ यह याद रखना उचित होगा कि जैसे बंकिम चंद्र ने अपने अंतिम दिनों मेँ अपने श्साम्यष् शीर्षक लेख के बारे में अपना मत बदल दिया थाए उसी तरह 'बंगाल के कृषक' शीर्षक इस निबंध में उन्होंने लिखा था ('विविध प्रबंधष्ए भाग दोए 1892) : " इससे पाँच सौ वर्ष पूर्व की देश की स्थिति का पता चलता है ... जमींदारों का वैसा अत्याचार अब नहीं है । नए कानून में उनकी ताकत को कम कर दिया गया हैं । " यहाँ 1885 के जनाधिकार कानून की ओर इशारा है-इसकी चर्चा बाद में की जाएगी । जो भी होए यहाँ बंकिम चंद्र ने जमींदारों की अनुपार्जित आय-वृद्धि (Unearned increment of income) के सार को अनुकरणीय रूप से हृदयंगम किया था । इसके नतीजे सबको मालूम हैं.जमींदारी की आय में वृद्धि के साथ कृषि में विनियोग और उत्पादन की दर में वृद्धि का कोई संबंध न था; जमींदार लोग लगान वसूल करने में बेहद तत्पर रहते थे, पर कृषि की उन्नति के प्रति जरा भी उत्सुकता उनमें न थी । ज्यादातर

जमींदार प्रवासी थे । अर्थात गाँव में रहते ही न थे (absentee landlord) : " ओ नाक पर चष्माधारे बाबूए बताइए तोए हाशिम शेख और रामा कैवर्त की भलाई विना चीज में है"

ध्यान देने कीं बात है कि बंकिम ने पुराने जमींदारों के पतन पर हाहाकार नारों किया। यह सच है कि 1793. 1815 के बीच कमोबेश चालीस प्रतिशत जमींदारी एक हाथ से दूसरे में चली गई । इस बात को लेकर हाहाकार करने की एक प्रथा सी चल पडी है कि पुराने जमींदार चले गए और उनकी जगह व्यापारियों और बनियों ने ले ली स यह सब बेकार की बातें हैं । इस बात का कोई प्रमाण नहीं है कि पुराने जमींदार 'भले' थे । किसान का पैसा कोई मोचीरामए गुड़ का व्यापारी नहींए कोई राजा उमेठता है, इसमें राजा के पक्षधरों के अलावा किसी के लिए संतोष का कोई कारण नहीं । इसके अलावा जिन नए लोगों के हाथ में जमीन गई उनमें से अधिकांष व्यापारी नहीं थे; वे थे जमींदारों के अमले, गुमाष्ते, पेशेवर लोग और दूसरे जमींदार, जो 'सूर्यास्त कानून' के शिकार जमींदारों की जमीनें खरीद लेते थे इस तथ्य को अध्यापक सिराजुल इस्लाम ने प्रमाण सहित सिध्द किया है |

अब हम भूमि–व्यवस्था और प्रशासन-नीति की ओर लौटते हैं । इस्तमरारी बंदोबस्त के इन सब परिणामों के अलावा शासक वर्ग की नजर में उसकी एक बडी कमी छुपी यह थी कि 1793 में लगान भले ही जमा होने लगाए पर उसे बढाने का कोई उपाय नही रहा । इम बंदोबस्त के लाभ का गुण न तो किसानों के पल्ले पड़ा न सरकार के । इसे बीच में जमींदार और उनके अधीन अमलों तथा इजारेदारों का चींटी दल खाता रहा I इन बिचौलियों कीं, संख्या और आय की दृष्टि से, बढोतरी स्वाभाविक थी | बंगाल के भू- राजस्व ये संबंधित फ्लॉड कमीशन (Flod Commission. 1938. 40) के अनुसारए ष्यह इस्तमरारी बदोबस्त के आधार पर निर्धारित तथा जमींदार को देय लगान की क्रमश: वृद्धि के बीच बढते हूए अंतर का परिणाम है । "स्वभावतः स्थायी अथवा इस्तमरारी बंदोबस्त की यह परिणति 19वीं श्शताब्दी के आरंभ में ही स्पष्ट हो गइं थी I

इसी परिप्रेक्ष्य में इस बात को समझा जा सकता है कि क्यों जमींदारी के बारे में मोहमुक्त होकर कंपनी किसी दूसरी भूमि- व्यवस्था की बात सोचने लगी I इसका उद्देश्य था बिचौलियों को पूरी तरह बाहर करके रैयत के साथ राजस्व का इकरारनामा और इस्तमरारी बंदोबस्त के बदले 20 या 30 वर्श के अंतर पर भू - राजस्व का फिर से निर्धारणए जिससे कृषि के विस्तार और बाजार की वृद्धि के साथ-साथ सरकार इम बढी हूई आय का हिस्सो पा सक | बंगाल की भूमि. व्यवस्था की कमियों के विरुद्ध प्रतिक्रिया के अलावा भी इस नई विचारधारा के पीछे एक और बात थी. और वह थी इंग्लैंड की उपयोगितावादी (Utilitarian) अर्थनीति और प्रशासन नीति का प्रभावए यानी डेविड रिकार्डों और जॉन बेन्थम का प्रभाव I अध्यापक ऐरिक स्टोक्स ने भाग्न की प्रषासन नीति पर इन दो महानुभावों केए खासकर बेन्थम के, प्रभाव का विश्लेषण किया है I इम यहाँ रिकार्डों के प्रभाव के संबंध में चर्चा करेंगे, क्योंकि बेन्थम का प्रभाव मूलतरू कानूनी और राजनीतिक पक्ष पर पड़ा था I रिकार्डों 19वीं शताब्दी कं आरंभिक वर्षों के अर्थनीति दृविशारदों में सर्वश्रेश्ठ था और परवर्ती क्लासिकी– अर्थषास्त्र पर उसका प्रभाव बहूत गहरा था । क्लासिकी– अर्थषास्त्रियों के प्रभुख आलोचक कार्ल मार्क्स के लेखन में सिर्फ रिकार्डों के बारे में श्रद्धा और नरमी का रुख दिखाइं देता है I उन दिनों ईस्ट इंडिया कंपनी के कर्मचारियों के प्रशिक्षण के लिए इंग्लैंड के हेलवेरी कालेज में अर्थशास्त्र कीं शिक्षा पर बडा जोर दिया जाता था । यूरोप में अर्थशास्त्र के अध्यापकों के जिन्र थोड़े-से पदों कीं सृष्टि हूई थी, उनमें एक पद इस कालेज में था, जिस पर टॉमस माल्थस पहले अध्यापक नियुक्त हुए थे । इस कालेज के छात्रों के माध्यम से तो निश्चय ही, इसके अलावा दूसरे प्रभावशाली व्यक्तियों (जैसे कंपनी के लंदन कार्यालय के एक उच्च अधिकारी जेम्स मिल - जो जाँन स्टूअर्ट मिलके पिता के रूप में, लगता है अधिक प्रसिद्ध हैं. और एलफिस्टनए एडवर्ड स्ट्रैची आदि) के माध्यम से रिकार्डों कीउपयोगितावादी नीति ने इस देश में अपना प्रभाव फैलाया |

रिकार्डों के अनुसार (उनकी पुस्तक 'प्रिसिपल्स आँफ पोलिटिकल इकोनॉमीश सन् 1821 में प्रकाषित हूई) लोग जमीन' के लिए जो लगान पाते हैं, वह सीमित परिमाण में प्रकृति के अवदान पर उनके एकाधिकार की वजह से उन्हे मिलता है| जमींदार खुद उत्पादन के लिए कुछ नहीं करता । मजदूर अपना श्रम लगाता हैं, पूँजीपति अपनी पूँजी लगाता है, उद्यमी (व्यवसायी) उद्योग-संगठन में सक्रिय होता है । उनसे कर लेने का मतलब हैं उत्पादन पर बोझ लादनाए उसके विकास अवरु) करना, पर चूंकि जमींदार कुछ नहीं करता, केवल स्वामित्व के कारण अनर्जित आय का उपभोग करता है, इसलिए जमींदारों कीं आमदनी पर कर लगाना बहूत सही हैं | इससे उत्पादन और आर्थिक प्रगति में कोई बाधा नहीं आएगी । इस नीति के व्यवहारिक प्रयोग के समय जमींदारों के स्वामित्व में से जितना अधिक सम्भव हो भू–राजस्व के रूप में सरकार को को लेलेना चाहिए | इसका मतलब यह की अगर सम्भव हो तो जमींदारी को एकदम खत्म कर देना भी उचित है । निश्चय ही अगर जमींदारी खत्म कर दी जाए तो भी मूल प्रश्न अपनी जगह रहेगा कि किसान से लगान की वसूली का हिसाब क्या हो? कृशि. उत्पाद के कुल मूल्य में से किसान के श्रम का मूल्य और उत्पादन में होने वाले खर्चों को निकाल कर जो बचे, उसका एक अंश' लगान के रूप में लिया जा सकता है । यह अंश क्या हो- आधा या दो तिहाई, इम बारे में अलग-अलग मत दिखाई देते हैं| संक्षेप में, रिकार्डों कीं यहीँ राजस्व.नीति थी, जिसने भारत में अपना प्रभाव दिखाया था । इस नीति का जमींदार-विरोधी रुख स्पश्ट है । बंगाल में इस्तमरारी बंदोबस्त को लेकर सरकारी अमलों के मोहभंग और विरोधी प्रक्रिया की बात पहले ही कहीँ जा चुकीं है | इन दोनों बातों ने एक साथ मिलकर रेयतवारी और महलवारी भूमि-यवस्था के पक्ष में ज़मीन तैयार की और अंग्रेज षासक वर्ग का इसकी ओर झुकाव बढा । नई उपयोगितावादी विचारधारा का अनुसरण करने के पीछे उनका उदेश्य था किसान के श्रम के मूल्य सहित कृशिकर्म के खर्च को निकाल कर जो बचे, उस पर भू-राजस्व का निर्धारण करना (यह राजस्व- निर्धारण का सार तत्व है, पर व्यावहारिक क्षेत्र में हम देखते हैं कि वास्तविक बंदोबस्त के साथ उसका संबंध कम होता हैं) ओर कुछ वर्शों के अंतर पर लगान का पृननिर्धारण कर के मालगृजारी की वृद्धि के साथ लगान की समता की रक्षा करना और रैयतवारी का मतलब है, सीधे-सीधे रैयत के साथ करारनामा करना और म्रहलबारी का मतलब है, रैयत के बदले महल या ग्राम या ग्राम. समूह को लगान के लिए जिम्मेदार मान लेना |

रैयतवारी प्रथा का जनक था टॅमस मुनरो | किस प्रकार इन सज्जन ने जिला–प्रषासक के पद से उन्नति करके मद्रास के गवर्नर होने तक एकनिश्ठ भाव से इस प्रथा का निर्माण किया था इसका विवरण प्रोफेसर नीलमणि मुखोपाध्याय ने हमें दिया है इस व्यवस्था का मूल आधार है | रैयत के साथ सीधे करार करना | पर सवाल था कि लगान कितना हो? इसका उत्तर बहुत गोलमटोल है, क्योंकि सिद्धांत भले ही सीधा हो पर इस बात का हिसाब करना कि कृशि द्रव्य का परिमाण कितना है, विभिन्न उत्पादों का मूल्य बाजार–दर से कितना है, किसान का बीज जुताई–बुवाई और पषु–पालन मे कितना खर्च है, वेतन के रूप में किसान–परिवार के कितने लोगों का कितने दिनों के श्रम का मूल्य लगाया जाएगा, बैल आदि का मूल्यहास(कमचतपबपंजपवद) प्रतिवर्श के हिसाब से कितना निर्धारित किया जाए, इत्यादि प्रष्न आसान न थे| पहले, दो प्रष्नों के उत्तरों से उत्पादन का खर्च निकलेगा | यह खर्च निकालकर जो बचेगा उसका पचास प्रतिषत भू–राजस्व होगा–यही मुनरो की राजस्व–नीति थी | जिस तरह के तथ्यों और गणितीय लेखे–जोखे की जरूरत थी, उसकेा अभाव में इन प्रष्नों के उत्तर प्रायः समय सेअ नहीं मिल पाते थे, और 19वीं षताब्दी के आरंभ मे मध्य अर्थात 1851 तक कुल आय "नेट" आय आदि को लेकर ढेर सारा बहस–मुबांहिसा चलता रहा | यह स्पश्ट था, खासकर मुनरो के अनुसार, कि षु: के दिनो में भू–राजस्व का निर्धारण बहुत ऊँची दरों पर किया गया था, क्योंकि विषेश रूप से फसल और उसके मूल्य के घटने–बढने के साथ राजस्व का कोई तालमेल न था | 1851 में तीस वर्शों के लिए नया बेदोबस्त षुरू हुआ | इस बार तय हुआ कि कुल आय मे से खर्चे निकाल कर जो बचेगा, उस "नेट" आय का पचास प्रतिषत भू–राजस्व के रूप मे निर्धारित किया जाएगा |

बंबई प्रेसीडेंसी में भी रैयत के साथ सीधा इकरारनामा और मद्रास की तरह का अस्थाई बंदोबस्त किया गया| यहां पर एक राजस्व – सिद्धांत बनाया गया | बंबई के आर. के. प्रिगल और विगेट–जैसे राजस्वषास्त्री बहुत कम थे, पर व्यवहारिक प्रयोग में मामला कुछ और हि सामने आया | 1824–28, 1835–72 के वर्शों मेए बार बार जो बंदोबस्त किया गया, उसका मूल सूत्र उत्पादन और खर्च का हिसाब नही था, बल्कि अलग– अलग जमीनों की उत्पादन– मता अर्थात उन्नति और पुराने राजस्व की दर के अनुसार निर्धारित करके, और उसके बाद जमीन की उन्नति के अनुसार रैयतों की जमीन पर उस राजस्व को विभाजित कर दिया जाता था · अधिकांष के अनुभाव और अनुमान पर निर्भर था | मद्रास की तरह बंबई मे 30साल के लिए बंदोबस्त किया गया |

ध्यान देने की बात है कि मद्रास और बंबई दोनों जगह समूह और संगठन के स्तर पर ग्रामो के अस्तित्व को नकार दिया गया था, जबकि मद्रास में मुनरो और बंबई में एलफिस्टन ने ग्रामीण समाजो की प्राचीनता और प्रषासनिक कार्यकारिता पर बहुत बल दिया था | भारतीय ग्रामों के संबंध मे कार्ल मार्क्स की सैद्धांतिक निबंधमाला एलफिस्टन आदि के प्रतिवेदनों पर ही आधारित थी | रैयतों के साथ सीधे–सीधे इकरारनामे करने के फलस्वरूप राजस्व–प्रषासनतंत्र मे ग्राम्य व्यवस्था के लिए कोई स्थान नही रह गया था और उसकी जगह ले ली थी अत्यंत चतुर, ज्यादातर घुसखोर, सरकारी कर्मचारियों ने | इस बात को बहुत सेअ लोग अवांछनीय मानते है |

अयोध्या का कुछ भाग, गंगा–यमुना का मध्यवर्ती इलाका और पंजाब धीरे–धीरे अंग्रेजो के हाथ मे आए | उन जगहो पर ग्रामीं समाज की एकजुटता और

प्रासनिक भूमिका बहुत सजीव थी, इसको अंग्रेज षासकों ने महसूस किया | उत्तर भारत के जिस प्रदेष को उस समय पष्चिमोत्तर प्रदेष कहा जाता था, जो अब उत्तर प्रदेष का पष्चिमी भाग है–वहाँ ग्रामों को ही राजस्व प्रशासन के काम मे लाने का विचार बनने लगा था द्य अथवा जिन स्थानों पर कोई जमीदार पूरे महल का स्वामी था, वहाँ उसी के साथ इकरारनामा किया गया | इसके साथ ही "रैयतवारी–जैसा तीस वर्श का अस्थाई बंदोबस्त और समान राजस्व–निर्धारण–नीति की भी आवष्यकता थी | ग्राम अथवा महल पर आधारित भूमि–व्यवस्था के साथ रैयतवारी बंदोबस्त की कुछ नीतियों को मिलाकर किए गए इस वर्णसंकर विवाह के पुरोहित बने होल्ट मैकेंजी | 1819 में अपने प्रतिवेदन मे उन्होने इस नए ढंग की महलवारी भूमि– व्यवस्था का सूत्रपात किया द्य 1822 मे यह व्यवस्था कानूनी हुई और उसके बाद गवर्नर विलियम वेंटिक के समर्थन और राबर्ट वर्ड तथा जेम्स टॉम्सन के 1833–43 के बंदोबस्त मे अपने सबसे उन्नत रूप मे सामने आई द्य उत्तर भारत मे जो बंदोबस्त हुआ वह बंबई की तुलना में कहीं ज्यादा वैज्ञानिक था जो जरीब तथा हिसाब–किताब के आधार पर किया गया लगता था | यहाँ भी उद्देष्य था कृशि–कर्म का खर्च निकालकर उत्पादन के "नेट" मूल्य का एक भाग– दो तिहाई भाग–लेना, पर यह 1833 से वसूल करना तय पाया गया | यह कुछ ज्यादा ही हो गया | इसीलिए 1855 में निर्णय लिया गया कि जहाँ भूस्वामी भू–राजस्व वसूल करता था वहाँ उसका आधा और दूसरी जगहों पर "नेट" उत्पादन के मूल्य का आधा भू–राजस्व माना जाएगा, पर दूसरे प्रदेषों की तरह यहाँ भी "नेट" उत्पादन के आधार पर भू–राजस्व तय करना मुष्किल था कि अंततः दरों के एक अंदाजिया हिसाब पर ही राजस्व का निर्धारण होता था–जमीन का पुराना राजस्व क्या था, कृशि–उत्पादों के दाम बढे या घटे और आसपास के इलाकों में भू–राजस्व की दर क्या है–इन्ही बातो पर वह अनुमान निर्भर करता था | भारत मे जगह–जगह भूमि–व्यवस्था का स्वरूप क्या था, इसे बेडेन पावेल की पुस्तक पढने पर समझा जा सकता है |

अब हमने तीन मूल भूमि–व्यवस्थाओं की तस्वीर देख ली ऽ बंगाल में इस्तमरारी बंदोबस्त, मद्रास और बंबई में अस्थाई तीस वर्शों का रैयतवारी बंदोबस्त और उत्तर भारत में तीस वर्शों का महलवारी बंदोबस्त |

इसी महलवारी बंदोबस्त को स्थान, काल, पात्र के फेरबदल के कारण थोडा अदल–बदलकर पंजाब और मध्य प्रदेष में मालगुजार वर्ग के लोग छोटे–मोटे जमींदार थे – इन्ही बातों को ध्यान मे रखकर थोडी रद्दो–बदल की गई थी | इधर अयोध्या के तल्लुकेदार बंगाल के जमींदारों–जैसे थे | पर इनके साथ बंगाल के जमींदारों–जैसा स्थाई इकरारनामा नही किया गया ऽ बंगाल का इस्तमरारी बंदोबस्त, मद्रास प्रेसीडेंसी के धुर उत्तर के जिलों में (इस समय इनका अधिकांष हिस्सा आंध्र प्रदेष के अंतर्गत है) लागू किया गया, क्योंकि यहाँ जमींदार वर्ग प्रबल था | उडीसा में भी जमींदारों को अनदेखा नहीं किया गया, पर बाकी सब प्रदेषों–जैसे सिंध प्रदेष, असम, कुर्ग आदि– में रैयतवारी प्रथा के ही अलग– अलग संस्करण लागू किए गए | ध्यान देने की बात है कि आमतौर पर तीस वर्श के अस्थाई बंदोबस्त ही किए गए, पर पिछडे प्रदेषों में षीघ्र ही आबादी और भू–राजस्व बढने की आषा में तीस वर्श से अधिक के बंदोबस्त न्ही किए गए–जैसे पंजाब और मध्य प्रदेष में | सारे भारत में इन तीन प्रकार की भूमि–व्यवस्थाओं का प्रसार कैसा रहा, इसका जायजा 1928–29 में मिला : जमीन की कुल आबादी का 19 प्रतिषत इस्तमरारी बंदोबस्त के अंतर्गत था, 29 प्रतिषत महलवारी बंदोबस्त के अंतर्गत और 52 प्रतिषत रैयतवारी बंदोबस्त के द्य 19वीं षताब्दी के अंतिम और 20वीं षताब्दी के प्रारंभिक वर्शों में भूमि–व्यवस्था के इस स्वरूप और उसके फलाफल के बारे मे काफी आलोचना हुई(पहले अमला वर्ग में, बाद मे राश्ट्रीय पत्र– पत्रिकाओं में |हमने देखा है कि बंगाल (और बिहार) की चिरस्थाई जमींदारी बंदोबस्त की विचारधारा का जो धराना था, उसने 19वीं षताब्दी के पहले तीन दषकों मे रैयतवारी और महलवारी समर्थकों के हाथों मात खाई थी, पर हमने यह भी देखा कि अस्थाई रैयतवारी वाले इलाकों में षुरू–षुरू मे बडी ऊँची दरों पर राजस्व–निर्धारण किया जा रहा था और राजस्व–निर्धारण के सिद्धांत और उसके व्यवहारिक प्रयोग के बीच दरार बढ रही थी | इसकेा अलावा राजस्व की वसूली के मामले में परंपरागत ढीली–ढाली नवाबी "माफ–मकूब–निस्कर" (कुछ जमीनों पर मालगुजारी माफ करने) देने के तरीके की जगह साहबी सख्ती ने ले ली थी | लगता है कि उन्नीसवीं षताब्दी के षुरू के कुछ वर्शों में विभिन्न प्रदेषों में एक बार मंदी भी आई थी

किन्हीं जगहो पर खेती बहुत कम हुई थी–मगर इस विशय में पर्याप्त तथ्यसंग्रह नही हो पाया है | इसके अलावा अकाल : 1802–04, 1806–07, 1812–15, 1819–20, 1823–26, 1830–32, 1837, 1854, 1860 इन सभी वर्शों मे उन इलाकों मे बडे–बडे अकाल पडे थे, जहाँ रैयतवारी और महलवारी की व्यवस्था को लेकर सरकारी दफ्तरों मे तरह–तरह के प्रयोग, लेखा–जोखा, प्रतिवेदन, सिद्धांत आदि पर खूब लिखा–पढी चल रही थी | कंपनी सरकार को खत्म करके महारानी की सरकार के आनेअ के बाद षुरू–षुरू में उत्तर भारत (वर्तमान उत्तर प्रदेष, पूर्वी पंजाब और पूर्वी राजस्थान) में अकाल पडा | इस अकाल के बाद 1860 में पहली बार सरकार द्वारा अकाल के मसले पर खोजबीन करके प्रतिवेदन प्रस्तुत किया गया | इसके बावजूद लंदन स्थित भारत सचिव चार्ल्स उड ने नीतिगत रूप से बेयर्ड स्मिथ का प्रस्ताव मान लिया था, पर इस बारे मे बातचीत और सलाह–मषविरे के दौरान दो समस्याएँ सामने आई |पहली , सिपाही विद्रोह, जिसके दमन मेअ काफी खर्च हुआ और भारत सरकार के सिर पर भारी कर्ज का बोझ लद गया तथा इंग्लैड के उद्योगपतियों के दबाव में आयकर में भारी छूट देने के कारण सरकार की आमदनी कम हो गई अर्थात आर्थिक असंतुलन पैदा हुआ |दूसरी, 11870 के दषक की षुरुआत से विष्व बाजार में सोने की तुलना मे चाँदी का दाम घटने लगा | अतएव चॉदी पर आधारित भारतीय मुद्रा का मूल्य सोने पर आधारित ब्रिटिष मुद्रा के मूल्य की तुलना मे घटने लगा | इधर महारानी की सरकार का "देषी खर्च"(अर्थात विदेषी खाते मे खर्च, जिसे इंग्लैंड में "होम चार्जेज" कहा जाता था) बढने लगा अर्थात असंतुलन पैदा हुआ | ऐसी स्थिति मे भविश्य मे भू–राजस्व बढाने की मता कोव स्वेच्छा से छोडकर स्थाई बंदोबस्त करना ब्रिटिष सरकार के लिए संभव न था | इसीलिए सलाह–मषविरा चलता रहा और अंत मे भारत सचिव ने पहले की नीति को 1882 मे खारिज करके घोशणा की कि अस्थाई बंदोबस्त ही चलेगा | इसकेा प्रायः दो दषक बाद रमेष चंद्र दत्त तथा भारतीय राश्ट्रीय कांग्रेस के नेताओं ने बंगाल के बाहर अन्य प्रदेषों में भी स्थाई बंदोबस्त की माँग षुरू की | इस बारे मे गवर्नर लार्ड कर्जन के साथ रमेष चंद्र दत्त के वाद–विवाद की बात सर्वविदित है | जो तथ्य सर्वविदित नहीं है वह यह है कि रमेष चंद्र दत्त ने 1875 में जवानी के जोष मे एक किताब लिख मारी थी, जिसमे स्थाई बंदोबस्त का पक्ष तो लिया ही गया था, पर इससे भी बडी बात यह थी कि उसमे जमीदार को देय किसान का लगान भी स्थाई रूप से तय करने की सिफारिष की गई थी, जिससे जमीदारो का षोशण उत्तरोत्तर बढाता ही न चला जाए | इस किताब पर जमीदारो के मुखपत्र "हिंदू पैट्रियट" ने कडी प्रतिक्रिया छापी थी ऽ षीर्शक था "सिविल सेवाओ की धमकी और जमीदार बधुओ की प्रार्थना | " अपने जीवन के अंतिम वर्शों मे रमेष चंद्र दत्त ने दोबारा स्थाई बंदोबस्त का प्रस्ताव पेष किया, मगर इस बार उन्होने किसान और जमीदार के बीच स्थाई बंदोबस्त कि बात नही उठाई | तत्कालीन भारतीय राश्ट्रीय कांग्रेस की माँग भी इसी श्रेणी की थी | यह सही है कि जहाँ भी स्थाई बंदोबस्त था वही पर कृशि आय का थोडा भाग सरकार को देना होता था : जैसे कि 1933–34 के एक ऑकडे के अनुसार बंगाल मे एक एकड खेतिहर जमीन पर केवल 0.92 रुपया भू–राजस्व था; जबकि मद्रास मे प्रति एकड खेतिहर जमीन पर 2.62 रुपया था |

References

1. BH Baden-Powell The land systems of Brilish India (Oxford); 1892.
2. E Stokes, B Chaudhuri, H Fukazawa, D Kumar. In Chapter II. CEHI. vol. II (Cambridge); 1983
3. N K Sinha. Economic History of Bengal, II:
4. BB Chaudhuri 'The land market in eastern india',
5. IESHR, No. l and 2. 1975. And 'Process of de-peasantization in Bengal and Bihar'I. H. R. no. I. 1975.
6. Sirajul Islam The permanent settlement in Bengal:a study of its operation (Dacca) 1979; 1790-1819
7. Ranajit Guha A rule of property for Bengal (Paris). 1963.
8. Eric Stokes The English Utilitarians and India (Oxford), 1959.
9. W J Barber British economic thought and India 1600 -1858) (Oxford, 1975); S. Ambirajan Classical political economy and British policy in India (C ambridge, 1978);
10. Sir Francis Floud. C hairman, Report of Land Revenue Commission. Bengal, (Calcutta) 1938; 1940-41.
11. B B Chaudhuri. Chapter III. CEHI. vol. II.
12. Nilmoni Mukherjec. the Ryotwary system in Madras. l (Calcutta) 1962; 792-1827.
13. Sarada Raju. The economic condition of Madras Presidency. (Madras) 1941; 1800-1850.
14. R E Frykenberg. (ed) Land Control and social structure in Indian history (Madison). 1969
15. B H Baden-Powell op. cit. vol. I;
16. R Kumar Western India in the 19th century (London) 1968.
17. Ratnalekha Ray Change in Bengal agrarian society (Delhi) 1979; 1760-1850.

18. W. C. Neale Economic change in rural India: land tenure and reform in Uttar Pradesh, (New Haven); I962; 1800-1955
19. Sumit Guha ‘Land market in upland Maharashtra. IESHR 1820-1960:2-3(24).
20. R. C Dutt The peasantry of Bengal (Calcutta, 1874).
21. J. N. Gupta Life and work of Romesh Chunder Dutt CIE (London. 1911); Sabyasachi Bhattacharya ‘Permanent Settlement redivivus‘ Bengal Past and Present, Bipin 7 Chandra The rise and growth of economic nationalism in India (Delhi. 1966) 1966; 85:159-82.